" कफ़न - प्रेमचंद "

झोंपड़े के द्वार पर बाप और बेटा दोनों एक बुझे हुए अलाव के सामने चुपचाप बैठे हुए हैं और अन्दर बेटे की जवान बीवी बुधिया प्रसव-वेदना से पछाड़ खा रही थी। रह-रह कर उसके मुँह से ऐसी दिल हिला देने वाली आवाज निकलती थी कि दोनों कलेजा थाम लेते थे। जाड़ों की रात थी, प्रकृति सन्नाटे में डूबी हुई। सारा गाँव अंधकार में लय हो गया था।

घीसू ने कहा, "मालूम होता है बचेगी नहीं। सारा दिन दौड़ते ही गया, जा, देख तो आ।"
माधव चिढ़ कर बोला, "मरना ही है तो जल्दी मर क्यों नहीं जाती, देख कर क्या करूँ?"
"तू बड़ा बेदर्द है बे! साल-भर जिसके साथ सुख-चैन से रहा, उसी के साथ इतनी बेवफाई!"
"तो मुझसे तो उसका तड़पना और हाथ-पाँव पटकना नहीं देखा जाता।"

चमारों का कुनबा था और सारे गाँव में बदनाम। घीसू एक दिन काम करता तो तीन दिन आराम। माधव इतना कामचोर था कि आध घंटे काम करता तो घंटे-भर चिलम पीता। इसलिए उन्हें कहीं मजदूरी नहीं मिलती थी। घर में मुट्ठी-भर भी अनाज मौजूद हो, तो उनके लिए काम करने की कसम थी।

जब दो-चार फाके हो जाते, घीसू पेड़ पर चढ़कार लकडियाँ तोड़ लाता और माधव बाजार में बेच आता और जब तक वे पैसे रहते, दोनों इधर-उधर मारे-मारे फिरते। जब फाके की नौबत आ जाती, तो फिर लकडियाँ तोड़ते या मजदूरी तलाश करते। गाँव में काम की कमी न थी। किसानों का गाँव था, मेहनती आदमी के लिए पचास काम थे। मगर इन दोनों को लोग उसी वक्त बुलाते, जब दो आदमियों से एक का काम पाकर भी सन्तोष कर लेने के सिवा और कोई चारा न होता। विचित्र जीवन था इनका! घर में मिट्टी के दो-चार बर्तनों के सिवा कोई सम्पत्ति नहीं। फटे चीथड़ों से अपनी नग्नता को ढँके हुए जिए जाते थे। संसार की चिन्ताओं से मुक्त। कर्ज से लदे हुए। गालियाँ भी खाते, मार भी खाते, मगर कोई भी गम नहीं। दीन इतने कि वसूली की आशा न रहने पर भी लोग इन्हें कुछ-न-कुछ कर्ज दे देते थे। मटर-आलू की फसल में दूसरों के खेतों से मटर या आलू उखाड़ लाते और भून-भानकर खा लेते, या दस-पाँच ऊस उखाड़ लाते और रात को चूसते।

घीसू ने आकाश-वृत्ति से साठ साल की उम्र काट दी और माधव भी सपूत बेटे की तरह बाप ही के पदचिहनों पर चल रहा था, बल्कि उसका नाम और भी उजागर कर रहा था। इस वक्त भी दोनों अलाव के सामने बैठकर आलू भून रहे थे, जो कि किसी के खेत से खोद लाए थे। घीसू की स्त्री का तो बहुत दिन हुए देहान्त हो गया था। माधव का ब्याह पिछले साल हुआ था। जब से यह औरत आई थी, उसने इस खानदान में व्यवस्था की नींव डाली थी। पिसाई करके या घास छीलकर वह सेर-भर आटे का इन्तजाम कर लेती थी और इन दोनों बेगैरतों का दोज़ख भरती रहती थी। जब से वह आई, ये दोनों और भी आलसी और आरामतलब हो गए थे, बल्कि कुछ अकड़ने भी लगे थे। कोई कार्य करने को बुलाता, तो निर्व्याज भाव से दुगुनी मजदूरी माँगते। वही औरत आज प्रसव-वेदना से मर रही थी और ये दोनों शायद इसी इन्तजार में थे कि वह मर जाय, तो आराम से सोएँ।

घीसू ने आलू निकालकर छीलते हुए कहा, "जाकर देख तो क्या दशा है उसकी? चुड़ैल का फ़िसाद होगा, और क्या? यहाँ तो ओझा भी एक रुपया माँगता है!"

माधव को भय था कि वह कोठरी में गया, तो घीसू आलुओं का बड़ा भाग साफ कर देगा। बोला, "मुझे वहाँ जाते डर लगता है।"
"डर किस बात का है, मैं तो यहाँ हूँ ही!"
"तो तुम्हीं जाकर देखो न?"
"मेरी औरत जब मरी थी, तो मैं तीन दिन तक उसके पास से हिला तक नहीं था। और मुझसे लजाएगी कि नहीं? जिसका कभी मुँह नहीं देखा, आज उसका उघड़ा हुआ बदन देखूँ! उसे तन की सुध भी तो न होगी। मुझे देख लेगी तो खुलकर हाथ-पाँव भी न पटक सकेगी।"
"मैं सोचता हूँ कोई बाल-बच्चा हो गया तो क्या होगा? सोंठ, गुड़, तोल, कुछ भी तो नहीं घर में!"

"सब-कुछ आ जाएगा। भगवान दें तो। जो लोग अभी एक पैसा नहीं दे रहे है, वे ही कल बुलाकर देंगे। मेरे नौ लड़के हुए, घर में कभी कुछ न था, मगर भगवान ने किसी तरह बेड़ा पार ही लगाया।"

जिस समाज में रात-दिन मेहनत करने वालों की हालत उनकी हालत से बहुत कुछ अच्छी नहीं न थी और किसानों के मुकाबले में वे लोग, जो किसानों की दुर्बलताओं से लाभ उठाना जानते थे, कहीं ज्यादा सम्पन्न थे, वहाँ इस तरह मनोवृत्ति का पैदा हो जाना कोई अचरज की बात न थी। हम तो कहेंगे घीसू किसानों से कहीं ज्यादा विचारवान था, जो किसानों के विचार शून्य समूह में शामिल होने के बदले बैठकबाज़ों की कुत्सित मंडली में जा मिला था। हाँ, उसमें यह शक्ति न थी कि बैठकबाजों के नियम और नीति का पालन करता। इसलिए जहाँ उसकी मंडली के और गाँव के सरगना और मुखिया बने हुए थे, उस पर सारा गाँव अँगुली उठाता था। फिर भी उसे यह तकसीन तो थी कि अगर वह फ़टेहाल है तो कम-से-कम उसे किसानों की-सी जी-तोड़ मेहनत तो नहीं करनी पड़ती। उसकी सरलता और निरीहता से दूसरे लोग बेजा फायदा तो नहीं उठाते।

दोनों आलू निकाल-निकालकर जलते-जलते खाने लगे। कल से कुछ नहीं खाया। इतना सब्र न था कि उन्हें ठंडा हो जाने दें। कई बार दोनों की जबानें जल गईं। छिल जाने पर आलू का बाहरी हिस्सा तो बहुत ज्यादा गरम न मालूम होता, लेकिन दाँतों के तले पड़ते ही अन्दर का हिस्सा जबान, हलक और तालू को जला देता था और उस अंगारे को मुँह में रखने से ज्यादा खैरियत इसी में थी कि वह अन्दर पहुँच जाए। वहाँ उसे ठंडा करने के लिए काफी सामान थे इसलिए दोनों जल्द-जल्द निगल जाते। हालाँकि इस कोशिश में उनकी आँखों से आँसू निकल आते।

घीसू को उस वक्त ठाकुर की बरात याद आई, जिसमें बीस साल पहले वह गया था। उस दावत में उसे जो तृप्ति मिली थी, वह उसके जीवन में एक याद रखने लायक बात थी और आज भी उसकी याद ताजा थी। बोला, "वह भोज नहीं भूलता। तब से फिर उस तरह का खाना और भरपेट नहीं मिला। लड़की वालों ने सबको भरपेट पूरियाँ खिलाई थीं, सबको! छोटे-बड़े सबने पूरियाँ खाईं और असली घी की! चटनी, रायता, तीन तरह के सूखे साग, एक रसेदार तरकारी, दही, मिठाई। अब क्या बताऊँ कि इस भोज में क्या स्वाद मिला! कोई रोक-टोक नहीं थी। जो चीज माँगो और जितना चाहो खाओ। लोगों ने ऐसा खाया, ऐसा खाया, किसी से पानी न पिया गया। मगर परोसने वाले हैं कि पत्तल में गरम-गरम, गोल-गोल सुवासित कचौरियाँ डाल देते हैं। मना करते हैं कि नहीं चाहिए, पत्तल पर हाथ रोके हुए हैं, मगर वे हैं कि दिए जाते हैं और जब मुँह धो लिया, तो पान-इलायची भी मिली, मगर मुझे पान लेने की कहाँ सुध थी! खड़ा न हुआ जाता था। चटपट जाकर अपने कंबल पर लेट गया। ऐसा दिल-दरियाव था वह ठाकुर!"

माधव ने इन पदार्थों का मन-ही-मन मज़ा लेते हुए कहा, "अब हमें कोई ऐसा भोज नहीं खिलाता।"
"अब कोई क्या खिलाएगा? वह जमाना दूसरा था। अब तो सबको किफायत सूझती है।
शादी-ब्याह में मत खर्च करो, क्रिया-कर्म में मत खर्च करो! पूछो, गरीबों का माल बटोर-बटोर कर कहाँ रखोगे! बटोरने में कमी नहीं हैं। हाँ, खर्च में किफायत सूझती है।"
"तुम़ने बीस-एक पूरियाँ खाई होंगी?"
"बीस से ज्यादा खाई थीं।"
"मैं पचास खा जाता।"
"पचास से कम मैंने भी न खाई होंगी। अच्छा पट्ठा था। तू तो मेरा आधा भी नहीं है।"

आलू खाकर दोनों ने पानी पिया और वहीं अलाव के सामने अपनी धोतियाँ ओढ़ कर, पाँव पेट में डाले सो रहे। जैसे दो बड़े-बड़े अजगर, गेंडुलियाँ मारे पड़े हों।
और बुधिया अभी तक कराह रही थी।

सबेरे माधव ने कोठरी में जाकर देखा तो, उसकी स्त्री ठण्डी हो गई थी उसके मुँह पर मक्खियाँ भिनक रही थीं। पथराई हुई आँखें ऊपर टँगी हुई थीं। सारी देह धूल से लथपथ हो रही थी। उसके पेट में बच्चा मर गया था।

माधव भागा हुआ घीसू के पास आया। फिर दोनों जोर-जोर से हाय-हाय करने लगे और छाती पीटने लगे। पड़ोस वालों ने यह रोना-धोना सुना तो दौड़े हुए आए और पुरानी मर्यादा के अनुसार इन अभागों को समझाने लगे।

मगर ज्यादा रोने-पीटने का अवसर न था। कफ़न और लकड़ी की फिक्र करनी थी। पर घर में तो पैसा इस तरह गायब था कि जैसे चील के घोंसले में माँस।

बाप-बेटे रोते हुए गाँव के जमींदार के पास गए। वह इन दोनों की सुरत से नफरत करते थे। कई बार इन्हें अपने हाथों पीट चुके थे चोरी करने के लिए, वादे पर काम पर न आने के लिए।

पूछा, " क्या है बे घिसुआ, रोता क्यों है? अब तो तू कहीं दिखाई भी नहीं देता! मालूम होता है, इस गाँव में रहना नहीं चाहता।"
घीसू ने जमीन पर सिर रखकर आँखों में आँसू भरे हुए कहा, "सरकार! बड़ी विपत्त्ति में हूँ। माधव की घरवाली रात को गुजर गई। रात-भर तड़पती रही, सरकार! हम दोनों उसके सिरहाने बैठे रहे। दवा-दारू जो कुछ हो सका, सब-कुछ किया, मुदा वह हमें दगा दे गई। अब कोई एक रोटी देने वाला भी न रहा, मालिक! तबाह हो गए। घर उजड़ गया। आपका गुलाम हूँ। अब आपके सिवा कौन, उसकी मिट्टी उठेगी। आपके सिवा किसके द्वार पर जाऊँ?"

जमींदार साहब दयालू थे। मगर घीसू पर दया करना काले कंबल पर रंग चढ़ाना था। जी में तो आया, कह दें चल, दूर हो यहाँ से! यों तो बुलाने से भी नहीं आता, आज जब गरज पड़ी, तो आकर खुशामद कर रहा है। हरामखोर कहीं का, बदमाश! लेकिन यह क्रोध या दंड का अवसर न था। जी में कुढ़ते हुए दो रुपए निकालर फेंक दिए। मगर सान्त्वना का एक शब्द भी मुँह से न निकाला। उसकी तरफ ताका भी नहीं। जैसे सिर का बोझ उतारा हो।

जब जमींदार साहब ने दो रुपए दिए, तो गाँव के बनिये-महाजनों को इन्कार का साहस कैसे होता? घीसू जमींदार के नाम

का ढिंढोरा भी पीटना खूब जानता था। किसी ने दो आने दिए, किसी ने चार आने। एक घंटे में घीसू के पास पाँच रुपए की अच्छी रकम जमा हो गई। कहीं से अनाज मिल गया, कहीं से लकड़ी। और दोपहर को घीसू और माधव बाजार से कफ़न लाने चले। इधर लोग बाँस काटने लगे।

गाँव की नरम-दिल स्त्रियाँ आ-आकर लाश को देखती थीं और उसकी बेकसी पर दो बूँद आँसू गिराकर चली जाती थीं।
"कैसा बुरा रिवाज है कि जिसे जीते-जी तन ढाँकने को चीथड़ा भी न मिले, उसे मरने पर कफन चाहिए।"
"कफ़न लाश के साथ जल ही तो जाता है!"
"और क्या रखा रहता है? यहीं पाँच रुपए पहले मिलते, तो कुछ दवा-दारू कर लेते।"

दोनों एक-दूसरे के मन की बात ताड़ रहे थे। बाजार में इधर-उधर घूमते रहे। कभी इस बजाज की दूकान पर गये, कभी उसकी दूकान पर। तरह-तरह के कपड़े, रेशमी और सूती देखे, मगर कुछ जँचा नहीं। यहाँ तक कि शाम हो गई। तब दोनों न जाने किस दैवी प्रेरणा से एक मधुशाला के सामने जा पहुँचे और जैसे किसी पूर्व-निश्चित योजन से अन्दर चले गए। वहाँ जरा देर तक दोनों असमंजस में खड़े रहे। फिर घीसू ने गद्दी के सामने जा कर कहा, "साहू जी, एक बोतल हमें भी देना।"

इसके बाद कुछ चिखौना आया, तली हुई मछलियाँ आईं और दोनों बरामदे में बैठकर शान्तिपूर्वक पीने लगे।

कई कुज्जियाँ ताबड़तोड़ पीने के बाद दोनों सरूर में आ गए।
घीसू बोला, "कफ़न लगाने से क्या मिलता है? आखिर जल ही तो जाता, कुछ बहू के साथ तो न जाता।"

माधव आसमान की तरफ देखकर बोला, मानो देवताओं को अपनी निष्पापता का साक्षी बना रहा हो, "दुनिया का दस्तूर है, नहीं लोग बामनों को हजारों रुपए क्यों दे देते हैं! कौन देखता है, परलोक में मिलता है या नहीं!"

"बड़े आदमियों के पास धन है, चाहे फूँके। हमारे पास फूँकने को क्या है?"

"लेकिन लोगों को जवाब क्या दोगे? लोग पूछेंगे नहीं, कफन कहाँ है?"

घीसू हँसा, "अबे कह देंगे कि रुपए क़मर से खिसक गए। बहुत ढूँढ़ा मिले नहीं। लोगों को विश्वास तो न आएगा, लेकिन फिर वही रुपए देंगे।"

माधव भी हँसा, इस अनपेक्षित सौभाग्य पर बोला, "बड़ी अच्छी थी बेचारी! मरी तो भी खूब खिला-पिलाकर!"

अभी बोतल से ज्यादा उड़ गई। घीसू ने दो सेर पूरियाँ मँगाईं। चटनी, अचार, कलेजियाँ। शराबखाने के सामने ही दुकान थी। माधव लपककर दो पत्तलों में सारा सामान ले आया। पूरा डेढ़ रुपया और खर्च हो गया। सिर्फ थोड़े-से पैसे बच रहे।

दोनों इस वक्त शान से बैठे हुए पूरियाँ खा रहे थे, जैसे जंगल में कोई शेर अपना शिकार उड़ा रहा हो। न जवाबदेही का खौफ़ था, न बदनामी की फिक्र। इन भावनाओं को उन्होंने बहुत पहले ही जीत लिया था।

घीसू दार्शनिक भाव से बोला, "हमारी आत्मा प्रसन्न हो रही है, तो क्या उसे पुन्न न होगा?"
माधव ने श्रद्धा से सिर झुकाकर तसदीक की, "जरूर से जरूर होगा। भगवान तुम अन्तर्यामी हो। उसे बैकुंठ ले जाना। हम दोनों हृदय से आशीर्वाद दे रहे हैं। आज जो भोजन मिला, वह कभी उम्र भर न मिला था।"

एक क्षण के बाद माधव के मन में एक शंका जागी। भोला, "क्यों दादा, हम लोग भी तो एक-न-दिन वहाँ जाएँगे ही।"
घीसू ने इस भोले-भाले सवाल का कुछ उत्तर न दिया। वह परलोक की बातें सोचकर इस आनन्द में बाधा न डालना चाहता था।

"जो वहाँ वह हम लोगों से पूछे कि तुमने कफ़न क्यों नहीं दिया तो क्या कहेंगे?"
"कहेंगे तुम्हारा सिर!"
"पूछेगी तो जरूर!"
"तू जानता है कि उसे कफ़न न मिलेगा? तू मुझे ऐसा गधा समझता है? साठ साल क्या दुनिया में घास खोदता रहा हूँ! उसको कफ़न मिलेगा और इससे बहुत अच्छा मिलेगा।"

माधव को विश्वास न आया। बोला, "कौन देगा? रुपए तो तुमने चट कर दिए। वह तो मुझसे पूछेगी। उसकी माँग में सिंदुर तो मैंने ही डाला था।"

घीसू गरम होकर बोला, "मैं कहता हूँ, उसे कफ़न मिलेगा! तू मानता क्यों नहीं?"
"कौन देगा, बताते क्यों नहीं?"
"वही लोग देंगे, जिन्होंने इस बार दिया। हाँ, अबकी रुपए हमारे हाथ न आएँगे।"

ज्यों-ज्यों अँधेरा बढ़ता था और सितारों की चमक तेज होती थी, मधुशाला की रौनक भी बढ़ती जाती थी। कोई गाता था, कोई डींग मारता था, कोई अपने संगी के गले लिपटा जाता था। कोई अपने दोस्त के मुँह से कुल्हड़ लगाए देता था।

वहाँ के वातावरण में सरूर था, हवा में नशा। कितने तो यहाँ आकर एक चुल्लू में मस्त हो जाते। शराब से ज्यादा वहाँ की हवा उन पर नशा करती थी। जीवन की बाधाएँ खींच लती थीं, और कुछ देर के लिए वे भूल जाते थे कि वे जीते हैं या मरते हैं! या, न जीते हैं न मरते हैं।

और ये दोनों बाप-बेटा अब भी मजे ले-लेकर चुसकियाँ ले रहे थे। सबकी निगहें इनकी ओर जमी हुई थीं। दोनों कितने भाग्य के बली हैं। पूरी बोतल बीच में हैं।

भरपेट खाकर माधव ने बची हुई पूरियों का पत्तल उठाकर एक भिखरी को दे दिया, जो खड़ा इनकी ओर भूखी आँखों से देख रहा था। और 'देने' के गौरव, आनन्द और उल्लास का उसने अपने जीवन में पहले बार अनुभव किया।

घीसू ने कहा, "ले, जा खूब खा और आशीर्वाद दे! जिसकी कमाई है, वह तो मर गई। पर तेरा आशिर्वाद उसे जरूर पहुँचेगा। रोयें-रोयें से आशीर्वाद दे, बड़ी गाढ़ी कमाई के पैसे हैं!"

माधव ने फिर आसमान की तरफ देखकर कहा, "वह वैकुण्ठ में जायेगी दादा, वह वैकुण्ठ की रानी बनेगी।"

घीसू खड़ा हो गया और जैसे उल्लास की लहरों में तैरता हुआ बोला, "हाँ, बेटा वैकुण्ठ में जायेगी। किसी को सताया नहीं, किसी को दबाया नहीं। मरते-मरते हमारी जिन्दगी की सबसे बड़ी लालसा पूरी कर गई। वह न वैकुण्ठ में जायेगी तो क्या ये मोटे-मोटे लोग जाएँगे, जो गरीबों को दोनों हाथों से लूटते हैं और अपने पाप को धोने के लिए गंगा में नहाते हैं और मन्दिरों में जल चढ़ाते हैं!"

श्रद्धालुता का यह रंग तुरन्त ही बदल गया। अस्थिरता नशे की खासियत है। दु:ख और निराशा का दौरा हुआ।

माधव बोला, "मगर दादा, बेचारी ने जिन्दगी में बड़ा दु:ख भोगा। कितना दु:ख झेलकर मरी!"
वह आँखों पर हाथ रखकर रोने लगा, चीखें मार-मारकर।
घीसू ने समझाया, "क्यों रोता है बेटा, खुश हो कि वह माया-जाल से मुक्त हो गई। जंजाल से छूट गई। बड़ी भाग्यवान थी जो इतनी जल्द माया-मोह के बन्धन तोड़ दिए।"

और दोनों खड़े होकर गाने लगे,
"ठगिनी क्यों नैना झमकावै? ठगिनी!"

पियक्कड़ों की आँखें इनकी ओर लगी हुई थीं और ये दोनों अपने दिल में मस्त गाते जाते थे।

फिर दोनों नाचने लगे। उछले भी, कूदे भी। गिरे भी, मटके भी। भाव भी बनाये, अभिनय भी किए और आखिर नशे से बदमस्त होकर वहीं गिर पड़े।

" कफ़न - प्रेमचंद "

Editing and Uploading by:
मयंक सक्सैना (Mayank Saxena)
आगरा, उत्तर प्रदेश, भारत (AGRA, Uttar Pradesh, INDIA)

e-mail id: honeysaxena2012@gmail.com
facebook id: lovehoney2012@facebook.com
website/blog: http://authormayanksaxena.blogspot.in